रिपोर्टेबल

भारत के सर्वोच्च न्यायालय में

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार

आपराधिक अपील संख्या 586 /2017

राजस्थान राज्य ... अपीलकर्ता(गण)

बनाम

छतरा ... प्रतिवादी(गण)

::हेडनोट::

दंड संहिता, 1860 - धारा 376 - बाल गवाह - पीड़ित का साक्ष्य - मूल्यांकन - नाबालिग लड़की से बलात्कार - उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी - आरोपी की दोषसिद्धि को अन्य बातों के साथ-साथ यह मानते हुए पलट दिया, की पीड़ित-बच्ची गवाह घटना के बारे में उदासीन/चुप थी, जो कि संभव नहीं था अगर घटना सच होती, और उसे बरी कर दिया - को चुनोती दी गई - प्रतिवादी को दोषमुक्त करने का आदेश रद्द - दोषसिद्धि बहाल।

निर्णय

न्यायमूर्ति श्री संजय करोल

1. लगभग चालीस साल पहले, 3 मार्च 1986 को एक ऐसी घटना घटी, जिसने एक नाबालिग लड़की के जीवन की दिशा को हमेशा के लिए बदल दिया, जिसे इस फैसले के प्रयोजनों के लिए 'वी'[1] के रूप में संदर्भित किया जाएगा। प्रतिवादी-आरोपी द्वारा कथित रूप से यौन उत्पीड़न किए जाने के बाद गुलाब चंद नामक व्यक्ति ने उसे बेहोशी की हालत में पाया था और उसके गुप्तांगों से खून बह रहा था। उक्त गुलाब चंद ने 4 मार्च, 1986[2] को संबंधित पुलिस स्टेशन में एक रिपोर्ट दर्ज कराई - और अब इस फैसले के

माध्यम से, इस मामले को अंततः समाप्त कर दिया जाएगा। यह बहुत दुख की बात है कि इस नाबालिग लड़की और उसके परिवार को अपने जीवन के इस भयावह अध्याय को बंद करने की प्रतीक्षा में जीवन के लगभग चार दशक गुजारने पड़ रहे हैं।

2. राज्य हमारे समक्ष, राजस्थान उच्च न्यायालय जयपुर पीठ, जयपुर[3] के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 12 जुलाई 2013 के निर्णय में दर्ज दोषमुक्ति के निष्कर्ष से व्यथित होकर उपस्थित है, जिसमें विद्वान सत्र न्यायाधीश, टोंक[4] द्वारा दिनांक 19 नवम्बर 1987 के निर्णय में दर्ज दोषसिद्धि के निष्कर्ष को खारिज कर दिया था।

3. एफआईआर में घटना के घटित होने को निम्नलिखित शब्दों में दर्ज किया गया:-

> "सेवा में,
>
> एस.एच.ओ.
>
> उनियारा।
>
> महोदय,
>
> विषय: 'वी' पुत्री 'एक्स'[5] के साथ बलात्कार के संबंध में।
>
> सादर निवेदन है कि यह घटना करीब 1:30 बजे की है कि मैं ग्राम सुरेली में खड्डा की झोपड़ी पर कुआं संभालने गया था और जैसे ही मैं छतरा पुत्र सुखदेव जाट के घर के पास पहुंचा तो मुझे एक छोटी बच्ची के रोने की आवाज सुनाई दी, जिस पर मैं घर के अंदर गया तो आरोपी की धोती खुली हालत में थी और मुझे देखकर वह बाहर भाग गया। मैंने देखा कि 'वी' जो कि 'एक्स' की बेटी है, बेहोश पड़ी थी और उसके गुप्तांग से खून बह रहा था, उस समय प्रभु कुम्हार बनाथा की तरफ से ऊंट लट्ठा पर सवार होकर वहां आया, ऐसे में मैं लड़की को ऊंट के लट्ठा पर लेकर बैठ गया और उसे घर ले आया क्योंकि न तो उसकी मां घर पर

मौजूद थी और न ही 'एक्स'। कुछ समय बाद 'वी' की मां सावित्री हमारे गांव आईं लेकिन चूंकि पुलिस स्टेशन जाने के लिए कोई साधन उपलब्ध नहीं था इसलिए रिपोर्ट दर्ज नहीं कराई गई। सुरेली की नर्स व प्राइवेट सिंधी डॉक्टर सिवाड़ को बुलाकर प्राथमिक उपचार कराया गयागया तथा उसके बाद आज वहां से आने के बाद मैंने थाने में रिपोर्ट दर्ज कराई है।

निवेदक-गुलाब चंद

पुत्र सुन्दर लाल जाति महाजन

निवासी सुरेली

एसडी/-

गुलाब चंद गुप्ता

तारीख 4.3.86

4. जांच पूरी होने के बाद चालान सुनवाई के लिए न्यायालय में पेश किया गया। अपने बयान को साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष ने 15 गवाहों से पूछताछ की और 19 दस्तावेज पेश किए। प्रतिवादी-अभियुक्त ने कहा कि यह एक झूठा मामला है जिसे गुलाब चंद ने गढ़ा है क्योंकि वह चाहता था कि 'वी' के पिता प्रतिवादी-अभियुक्त का घर खाली कर दें। उसने अपने बचाव में दो गवाह और चार दस्तावेज पेश किये।

<u>विचारण न्यायालय का फैसला</u>

5. विचारण न्यायालय के समक्ष एकमात्र मुद्दा यह था कि प्रतिवादी-अभियुक्त ने 'वी' का यौन उत्पीड़न किया था या नहीं। निर्णयों के अवलोकन से पता चलता है कि शिकायतकर्ता गुलाब चंद, जिससे पी.डब्लू.-2 के रूप में पूछताछ की गई थी, पर काफी हद तक भरोसा किया गया है, जिसका समर्थन पी.डब्लू.-14, डॉ. वासुदेव के बयान से होता है। 'वी' के विरुद्ध यौन उत्पीड़न के संबंध में निष्कर्ष निम्नानुसार है:

"39. ऐसी स्थिति में जब हम पुनः पी.डब्लू.-2 गुलाबचंद के बयान पर विश्वास करते हैं तो उसका यह साक्ष्य कि अभियुक्त ने पी.डब्लू.-1 'वी' के साथ जबरदस्ती बलात्कार किया, विश्वसनीय हो जाता है और इस संबंध में पी.डब्लू.-2 गुलाबचंद काबयान पी.डब्लू.-14 वासुदेव के बयान से पुष्ट होता है कि पी.डब्लू.-1 'वी' की योनि में जो चोट लगी थी, वह जबरदस्ती संभोग के कारण लगी थी और वह संभोग अभियुक्त द्वारा पी.डब्लू.-1 के साथ जबरदस्ती किया गया था। पीडब्लू-14 डॉ. वासुदेव ने यहां तक कहा है कि पीडब्लू-1 'वी' की हाइमन पूरी तरह से फटी हुई थी और उसका अग्रभाग और पिछला भाग फट गया था और डॉक्टर ने यह भी कहा है कि यदि थोड़ा और प्रवेश होता तो लिंग गर्भाशय फटने के बाद लड़की के पेट में पहुंच जाता और जिससे लड़की की मृत्यु हो सकती थी। इस प्रकार इस डॉक्टर के साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि आरोपी द्वारा पीडब्लू-1 की योनि में जो प्रवेश किया गया था वो गंभीर था और ऐसा करने से धारा 375 आईपीसी में जो भी तत्व बताए गए हैं वे पूरे हो जाते हैं।"

आरोपी के वकील ने मकसद का मुद्दा उठाया। हालाँकि, न तो यह और न ही यह संभावना कि 'वी' को लगी चोट कील से लगी चोट के कारण थी, को न्यायालय का समर्थन प्राप्त हुआ। इसमें एक पहलू यह भी था कि एफआईआर अगले दिन दर्ज की गई। इस मुद्दे पर, विचारण न्यायालय ने यह माना कि चूंकि थाना उनियारा, उस गाँव से 14 किलोमीटर दूर स्थित है जहां घटना हुई थी, यानि सुरेली, और 'वी' को लगी चोटें काफी गंभीर थी, इसलिए देरी को उचित माना गया। अंत में यह माना गया कि प्रतिवादी-अभियुक्त ने वास्तव में भारतीय दंड संहिता, 1860[6] की धारा 376 के तहत दंडनीय अपराध किया था, और यह देखते हुए कि उसने पहली बार अपराध किया था और अपराध के प्रासंगिक समय पर उसकी आयु केवल 21 वर्ष थी, उसे 19 नवंबर 1987 के सजा आदेश के तहत 10 साल के बजाय 7 साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई।

<u>आक्षेपित निर्णय</u>

6. प्रतिवादी-अभियुक्त ने उसे दी गई सजा से व्यथित होकर मामले को उच्च न्यायालय में अपील के रूप में प्रस्तुत किया। कुल 6 पृष्ठों के निर्णय के माध्यम से, विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए दोष के निष्कर्षों को पलट दिया गया तथा प्रतिवादी-अभियुक्त को उसके विरुद्ध आरोपों से बरी कर दिया गया। इतना कहना ही पर्याप्त है कि जिस तरह से उच्च न्यायालय ने इस मामले को निपटाया, उससे हम आश्चर्यचकित हैं। प्रथम अपीलीय न्यायालय के रूप में, उच्च न्यायालय से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अधीनस्थ न्यायालय के निष्कर्षों की पुष्टि करने या उनमें परिवर्तन करने से पहले अपने समक्ष उपलब्ध साक्ष्यों का स्वतंत्र रूप से मूल्यांकन करेगा। यह कानून की स्थापित स्थिति है। [देखें: ***एटली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य***[7]; और ***गीता देवी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य आदि***[8]]। स्पष्ट रूप से, इसका पालन नहीं किया गया है। उच्च न्यायालय द्वारा मामले की योग्यता पर की गई चर्चा नीचे पुनः प्रस्तुत की गई है:

> "अभियोजन पक्ष के मुख्य गवाह पीडब्लू-2 गुलाब चंद का बयान, जैसा कि एक्स.डी-1 में दर्ज किया गया है, महत्वपूर्ण है।उस दस्तावेज के अवलोकनसे पता चलता है कि जब वह काम में दाखिल हुआ तो उसने अपीलकर्ता को पीड़िता के साथ जबरन यौन संबंध बनाते हुए देखा था। यह उसकी लिखित रिपोर्ट में दिए गए विवरण के विपरीत है, जिसके अद्धार पर जांच शुरू की गई थी, जिसके आधार पर जांच शुरू की गई थी, साथ ही मुकदमे में उसके बायकन के भी विपरीत है। पीडब्ल्यू-10 प्रभु ने भी उसका पूरा समर्थन नहीं किया है। उसका यह कथन कि उसका ध्यान पीड़िता की चीख-पुकार ने खींचा, पीड़िता के इस कथन से झूठा साबित होता है कि वह बेहोश पाई गई थी और बोलने में असमर्थ थी।
>
> यद्यपि पीड़िता, 'वी'[9], न्यायालय में अपनी परीक्षा के समय बच्ची थी, लेकिन यह असंभव है कि यदि घटना सत्य होती तो वह इतनी उदासीन और निष्क्रिय होती, जितनी कि उससे इसके बारे में पूछे जाने पर थी। ऐसा लगता है कि इस संबंध में उसे जानकारी देने का कोई प्रयास नहीं किया गया। यद्यपि उसकी उम्र को ध्यान में रखते हुए, यदि घटना अभियोजन पक्ष द्वारा बताए गए तरीके से घटित हुई होती,

तो भी वह उसे भूल सकती थी, लेकिन यह स्वीकार्य नहीं है कि यदि यह सच होता, तो उसके माता-पिता या उसके रिश्तेदारों ने कम से कम उसके माध्यम से अदालत में प्रारूप मात्र तथ्यों को बयान करने का कोई प्रयास नहीं किया होता। यह इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि बचाव पक्ष की ओर से लगातार यही कहा गया है कि अपीलकर्ता को उसके और पीड़िता के पिता के बीच विवाद के कारण फंसाया गया था। हालांकि मेडिकल साक्ष्य उसके निजी अंगों पर चोट साबित करते हैं, लेकिन फोरेंसिक साइंस लैबोरेटरी की रिपोर्ट में पीड़िता के कपड़े, जिस लुंगी पर उसे गुलाब चंद (पीडब्ल्यू-2) ने लिटाया था, में वीर्य की मौजूदगी नहीं दिखाई गई है और पुलिस द्वारा खून से सनी मिट्टी भी नहीं दिखाई गई है। गुलाब चंद के अलग-अलग बयान भी एक ऐसा कारक है जो अभियोजन पक्ष के मामले की विश्वसनीयता पर आघात करता है।

उपरोक्त सभी बातों पर समग्र रूप से विचार करने के बाद, मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि अभियोजन पक्ष सभी उचित संदेहों से परे आरोप साबित करने में सक्षम नहीं रहा है, और अपीलकर्ता इसके लाभ का हकदार है। विवादित निर्णय और आदेश को रद्द किया जाता है। अपील स्वीकार की जाती है। अपीलकर्ता को उसकी जमानत बांड से मुक्त कर दियाजाता है।विद्वान न्यायमित्र श्री रौनक सिंघवी द्वारा प्रदान की गई सहायता को स्वीकार करते हुए, यह न्यायालय उनकी 5000/- रुपये की व्यावसायिक फीस का भुगतान राज्य सरकार द्वारा वहन किए जाने का निर्देश देता है।"

7. हमें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उच्च न्यायालय ने पूरे मामले में पीड़िता का नाम लेकर उल्लेख किया है। इस न्यायालय ने, विवादित निर्णय की तिथि से कम से कम एक दशक पहले के निर्णयों में, दुर्भाग्यपूर्ण पीड़िता की गोपनीयता को संरक्षित करते हुए, इस तरह के प्रतिबंध का पालन करने के महत्व पर प्रकाश डाला है, भले ही यह प्रतिबंध स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय या इस न्यायालय पर लागू न हो। [देखें: ***भूपिंदर शर्मा बनाम***

हिमाचल प्रदेश राज्य[10]; ***कर्नाटक राज्य बनाम पुट्टराजा***[11]; और ***दिनेश बनाम राजस्थान राज्य***[12]]हमने पीड़ित बच्चे का नाम हटा दिया है। जैसा कि रिकॉर्ड हमारे सामने है, अभियोक्ता का नाम नहीं छिपाया गया है, तथापि इस तथ्य पर विचार करते हुए कि ***निपुण सक्सेना बनाम भारत संघ***[13] इस अपील के लंबित रहने के दौरान जारी किए गए थे, रिकार्ड से उद्धृत भाग में भी उसका नाम हटा दिया गया है।

8. सामान्य परिस्थितियों में, मामले के गुण-दोष पर दिए गए क्षणिक विचार को देखते हुए, नए सिरे से विचार के लिए उच्च न्यायालय को वापस भेजने का आदेश एक अनुमेय दृष्टिकोण हो सकता था, तथापि जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है कि इस मामले की उत्पत्ति 40 वर्ष पुरानी है, और, इसलिए, इस दृष्टिकोण को अपनाने से न्याय नहीं होगा, विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वर्ष 1987 की अपील का निपटारा वर्ष 2013 में आक्षेपित निर्णय द्वारा किया गया था। दूसरे शब्दों में कहें तो आपराधिक अपील का निपटारा होने में छब्बीस साल लग गए। इसलिए अब हम रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों की जांच करने जा रहे हैं।

<u>विश्लेषण और निष्कर्ष</u>

9. उच्च न्यायालय के तर्क का मुख्य आधार पी.डब्लू.-1, 'वी', पी.डब्लू.-2 और पी.डब्लू.-10 के बयान हैं।

पीड़िता (पीडब्लू-1) के बयान का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:

प्रश्न: क्या आप पढ़ाई कर रहे हैं?
उत्तर: हां मैं पढ़ाई कर रही हूं।

प्रश्न: आप कौन सी कक्षा में पढ़ रही हैं?
उत्तर: मैं पहली कक्षा में पढ़ रही हूँ।

प्रश्न: झूठ बोलना चाहिए या सच बोलना चाहिए?
उत्तर: सच बोलना चाहिए।

नोट:- गवाह को सच्चाई का मतलब पता है, हालाँकि उसकी उम्र कम है। गवाह की माँ गवाह के साथ अदालत में मौजूद है। अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता को इस बात पर आपत्ति है कि गवाह की मां को अदालत से बाहर जाना होगा क्योंकि वह

भी मामले में गवाह है। चूंकि साक्षी की मां घटना की प्रत्यक्षदर्शी नहीं है तथा घटना के बाद के तथ्यों की साक्षी है, तथा साक्षी की आयु कम है तथा वह मां की अनुपस्थिति में न्यायालय कक्ष में खड़ा होने में असमर्थ है, इसलिए पी.पी. की प्रार्थना पर उसकी मां को न्यायालय कक्ष में उपस्थित रहने की अनुमति प्रदान की गई तथा निर्देश दिया गया कि वह साक्षी से पूछे गए प्रश्नों का कोई उत्तर साक्षी को न सुझाएं।

प्रश्न: क्या आप आरोपी को जानती हैं?
उत्तर: गर्दन हिलाकर हाँ कहा।

प्रश्न: क्या आप आरोपी का नाम जानती हैं?
उत्तर: गवाह बार-बार पूछने पर जवाब नहीं दे रही है और चुप रहती है।

प्रश्न: आपके साथ क्या हुआ और कब?
उत्तर: विद्वान पी.पी., उसकी माँ और न्यायालय ने बार-बार समझाया कि जवाब दो, लेकिन साक्षी चुप रही और एक भी शब्द नहीं बोली। बहुत दबाव के कारण आँखों से आँसू बह रहे थे, लेकिन मुँह से बोल नहीं पा रही थी"

<u>पी.डब्लू.-2 गुलाब चंद:</u>

"...जब मैंने दरवाजा खोला तो मैंने देखा कि आरोपी छतरा, जो उस समय अदालत में मौजूद था, उसके ऊपर बैठा हुआ था।जब आरोपी ने मुझे देखा तो वह कमरे से भाग गया, आरोपी की धोती खुली हुई थी और वहीं पड़ी थी।जब मैं उसे सहारा देने के लिए गया तो वह बेहोशी की हालत में थी और उसके गुप्तांग से खून बह रहा था, उसके शरीर के पीछे एक सफेद कपड़ा पड़ा था जिस पर खून का धब्बा था...

... प्रदर्श बी-1 में आरोपी द्वारा लड़की 'वी' पर बैठने का कोई उल्लेख नहीं है, मुझे नहीं पता, वे अपनी रिपोर्ट में इसके बारे में लिखना कैसे याद नहीं रख सके। प्रदर्श डी-1 में इस बारे में कुछ भी उल्लेख नहीं है, मैंने पुलिस को इस बारे में बताया। प्रदर्श बी-1 में उन्होंने रिपोर्ट में 'वी' के मुंह में कपड़े का

टुकड़ा ठूंसने के बारे में, ताकि वह उस समय चिल्ला न सके, नहीं लिखा, जब मैंने दरवाजा खोला तो आरोपी ने मुझे देख लिया और उसी समय भाग गया। इसलिए, मैं यह नहीं कह सकता कि उस समय जब अभियुक्त ऊपर [‘वी’] था, उस समय अभियुक्त के हाथ खुले थे या नहीं।”

पी.डब्लू.-10 प्रभु[14]:

“... मैं खड्डा की झोपड़ी के पास आया तो पाया कि एक्स की बेटी ‘बयाना चबूतरी’ पर बेहोश पड़ी थी। फिर मैं गाड़ी पर लदा सामान उतारने गया और फिर सुरेली की ओर बढ़ा और फिर पी.डब्लू.-2 गुलाबचंद के घर पर रुका। उस समय गाड़ी में मेरे साथ कोई अन्य पुरुष नहीं था। बच्ची की हालत बहुत खराब थी और उसके कपड़े खून से सने हुए थे। उसके गुप्तांगों से खून बह रहा था। मैंने घटनास्थल पर आरोपी को नहीं देखा।

...

पुलिस ने मुझसे कोई पूछताछ नहीं की। यह कहना गलत है कि जब मैं खड्डा की झोपड़ी में पहुंचा, उस समय आरोपी वतार/छतरा अपनी धोती पकड़कर नदी किनारे की ओर भाग रहा था।”

10. इस स्तर पर, आइए हम अभियोजन पक्ष के मामले से संबंधित अन्य गवाहों पर विचार करें। पी.डब्लू.-14, डॉक्टर ने निम्नलिखित गवाही दी:

“....मैंने 13.03.86 को आरोपी छतरा की मेडिकल जांच की, उसके लिंग के ऊपरी भाग पर खरोंच का निशान पाया गया तथा उसके लिंग पर सूजन पाई गई तथा खरोंच भी पाई गई। इस प्रकार का घाव केवल नाबालिग लड़की के साथ जबरदस्ती संबंध बनाने से ही मिल सकता है.....

.....

“....जांच के समय ‘वी’ के गुप्तांग से खून नहीं निकल रहा था लेकिन गुप्तांग के चारों ओर खून के धब्बे पाए गए थे। 'वी' के गुप्तांग के अन्दर माइक्रोस्कोप से देखने पर मुझे शुक्राणु नहीं

मिले। 3 वर्ष की बच्ची के गुप्तांग और गर्भाशय के बीच की दूरी बहुत कम होती है, यदि प्रवेश अधिक होगा तो पेनिस गर्भाशय को फाड़कर बच्ची के पेट तक प्रवेश कर जाएगा, जिससे बच्ची की मृत्यु हो सकती है। आंतरिक केनेल में चोट थी लेकिन गर्भाशय में कोई चोट नहीं है...."

11. पी.डब्लू.-3, सावित्री, 'वी' की मां ने गवाही दी कि उसे पड़ोसी गांव जाना पड़ा क्योंकि वहां किसी की मृत्यु हो गई थी। जब वह अपना गांव से निकली तो उसने 'वी' की देखभाल प्रतिवादी अभियुक्त को सौंप दी थी। जब वह पड़ोसी गांव में अंतिम संस्कार जुलूस में शामिल होकर लौटी, तो उसे उसके गांव की महिलाओं ने बताया कि 'वी' घायल हो गई है और उसे सुरेली ले जाया गया है। बाद में वह भी वहां गई और पाया कि 'वी' बेहोश थी। उसने पीड़िता के पहने कपड़ों की सकारात्मक पहचान की है। अस्पताल की नर्स ने उसे बताया कि 'वी' के साथ बलात्कार किया गया था।

डीडब्लू-1 प्रतिवादी-आरोपी का भाई है। उसने गवाही दी कि 'एक्स' उनका किराएदार था और उसे उक्त आवास खाली करने के लिए कहा गया था, लेकिन उसने ऐसा करने से इनकार कर दिया। उन्होंने आगे गवाही दी कि पी.डब्लू.-2 गुलाब चंद ने डॉक्टर को 4,000 रुपये की रिश्वत दी थी, ताकि वह रिपोर्ट में कह सके कि 'वी' के साथ यौन उत्पीड़न किया गया था। इसके अलावा, यह कहा गया कि डॉक्टर ने उससे 7,000 रुपये का भुगतान करने को कहा और यदि भुगतान कर दिया जाता, तो रिपोर्ट में कहा जाता कि 'वी' के साथ बलात्कार नहीं हुआ था। उसने पैसे नहीं दिए और इसके बजाय शिकायत दर्ज कराई, जिस पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। उन्होंने इस बात से इनकार किया कि सावित्री, पी.डब्लू.-3 ने 'वी' को आरोपी की देखभाल में छोड़ा था और उसने उसके साथ यौन उत्पीड़न किया था।

12. आइए अब हम यौन उत्पीड़न के शिकार बच्चों से संबंधित मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों पर विचार करें।

राजस्थान राज्य बनाम ओम प्रकाश[15] मामले में इस न्यायालय ने बच्चों के विरुद्ध यौन प्रकृति के अपराधों के विरुद्ध निम्नलिखित शब्दों में चेतावनी दी थी:

"**19.** बाल बलात्कार के मामले यौन लालसा के विकृत मामले हैं, जहां यौन सुख की तलाश में मासूम बच्चों को भी नहीं

बख्शा जाता है। इससे ज्यादा घिनौना कृत्य और कुछ नहीं हो सकता। यह मानवता के खिलाफ अपराध है। ऐसे कई मामले सामाजिक कलंक के कारण प्रकाश में ही नहीं आते। कुछ सर्वेक्षणों के अनुसार, बच्चों के साथ बलात्कार के मामलों में भारी वृद्धि हुई है। बच्चों को विशेष देखभाल और सुरक्षा की आवश्यकता होती है। ऐसे मामलों में, अदालतों के कंधों पर इन बच्चों को उचित कानूनी सुरक्षा प्रदान करने की जिम्मेदारी अधिक है। उनकी शारीरिक और मानसिक गतिहीनता के कारण ऐसी सुरक्षा की आवश्यकता है। बच्चे हमारे देश के प्राकृतिक संसाधन हैं। वे देश का भविष्य हैं। कल की उम्मीद उन पर टिकी है। हमारे देश में बालिकाएं बहुत ही असुरक्षित स्थिति में हैं और यौन शोषण के अन्य तरीकों के अलावा उसके शोषण का एक तरीका बलात्कार भी है। ये कारक एक अलग दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता की ओर इशारा करते हैं..."

अनेक मामलों में, इस न्यायालय के साथ-साथ अन्य न्यायालयों ने भी मामले में बाल गवाह के बयान की प्रयोज्यता पर चर्चा की है। हम उनमें से कुछ पर गौर कर सकते हैं:

दत्तू रामराव सखारे बनाम महाराष्ट्र राज्य[16] में इस न्यायालय ने कहा:

"5....यदि कोई बाल गवाह तथ्यों को प्रमाणित करने में सक्षम पाया जाता है और ऐसा साक्ष्य विश्वसनीय है तो वह दोषसिद्धि का आधार हो सकता है। दूसरे शब्दों में, शपथ के अभाव में भी बाल गवाह के साक्ष्य पर साक्ष्य अधिनियम की धारा 118 के अंतर्गत विचार किया जा सकता है, बशर्ते कि ऐसा गवाह प्रश्नों को समझने में सक्षम हो तथा उनका तर्कसंगत उत्तर देने में सक्षम हो। बाल गवाह का साक्ष्य और उसकी विश्वसनीयता प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करेगी। एकमात्र सावधानी जो अदालत को एक बाल गवाह के साक्ष्य का आकलन करते समय ध्यान में रखनी चाहिए, वह यह है कि गवाह विश्वसनीय होना चाहिए और उसका आचरण किसी भी अन्य सक्षम गवाह की तरह होना

चाहिए और उसके किसी तरह के बहकावे में आने की कोई संभावना नहीं होनी चाहिए..."

हरिओम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य[17] में तीन न्यायाधीशों की पीठ ने ***सूर्यनारायण बनाम कर्नाटक राज्य***[18] में इस न्यायालय द्वारा बरती गई सावधानी को दोहराया कि "बाल गवाह की गवाही की पुष्टि एक नियम नहीं बल्कि सावधानी और विवेक का एक उपाय है"। इसमें आगे कहा गया:

> "6. इस न्यायालय ने *पंछी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* [*पंछी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1998) 7 एससीसी 177: 1998 एससीसी (क्रि) 1561*] में माना कि बाल गवाह के साक्ष्य का मूल्यांकन अधिक सावधानी से और अधिकसतर्कता के साथ किया जाना चाहिए क्योंकि एक बच्चा दूसरों द्वारा बताई गई बातों से प्रभावित होने के लिए अतिसंवेदनशील होता है और इस प्रकार वह बहकावे का आसान शिकार बन जाता है। बाल गवाह के साक्ष्य पर भरोसा करने से पहले उसे पर्याप्त पुष्टि मिलनी चाहिए, क्योंकि पुष्टि का नियम कानून की तुलना में व्यावहारिक ज्ञान पर आधारित है (*प्रकाश बनाम मध्य प्रदेश राज्य* [*प्रकाश बनाम मध्य प्रदेश राज्य, (1992) 4 एससीसी 225: 1992 एससीसी (क्रि) 853*]; बेबी कंदायनाथिल बनाम केरल राज्य [बेबी कंदायनाथिल बनाम केरल राज्य, 1993 सप्प (3) एससीसी 667: 1993 एससीसी (*क्रि*) 1084]; राजा राम यादव बनाम बिहार राज्य [राजा राम यादव बनाम बिहार राज्य, (1996) 9 एससीसी 287: 1996 एससीसी (*क्रि*) 1004] और दत्तू रामराव सखारे बनाम महाराष्ट्र राज्य [दत्तू रामराव सखारे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1997) 5 एससीसी 341: 1997 एससीसी (*क्रि*) 685])।
>
> 7. इसी आशय का निर्णय उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अशोक दीक्षित [उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अशोक दीक्षित, (2000) 3 एससीसी 70: 2000 एससीसी (क्रि) 579] में दिया गया है।" (2021) 4 एससीसी 345 (2001) 9 एससीसी 129।"

13. बाल गवाहों के संबंध में नियम अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट द्वारा 1895[19] में निम्नलिखित शब्दों में निर्धारित किया गया था:

"5....जबकि कोई भी व्यक्ति केवल दो या तीन वर्ष के शिशु को गवाह के रूप में बुलाने के बारे में नहीं सोचेगा, लेकिन योग्यता के प्रश्न को निर्धारित करने वाली कोई सटीक आयु नहीं है। यह बच्चे की क्षमता और बुद्धि पर निर्भर करता है, साथ ही सत्य और असत्य के बीच अंतर को समझने की उसकी क्षमता पर भी निर्भर करता है, साथ ही सत्य और असत्य को बताने के उसके कर्तव्य पर भी निर्भर करता है। इस प्रश्न का निर्णय मुख्यतः परीक्षण न्यायाधीश पर निर्भर करता है, जो प्रस्तावित गवाह को देखता है, उसके व्यवहार, उसकी बुद्धि के स्पष्ट स्वामित्व या अभाव को देखता है, तथा किसीभी परीक्षण का सहारा ले सकता है, जिससे उसकी क्षमता और बुद्धि के साथ-साथ शपथ के दायित्वों के बारे में उसकी समझ का पता चल सके।चूंकि इनमें से कई मामलों को रिकॉर्ड में दर्ज नहीं किया जा सकता, इसलिए विचारण न्यायाधीश के फैसले को समीक्षा के दौरान तब तक नहीं बदला जाएगा, जब तक कि संरक्षित किए गए रिकॉर्ड से यह स्पष्ट न हो जाए कि वह निर्णय त्रुटिपूर्ण था।"

यौन उत्पीड़न की शिकार एक बच्ची द्वारा दिए गए साक्ष्य की व्याख्या करते हुए, इस न्यायालय ने ***हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम संजय कुमार***[20] में माना कि सामाजिक वास्तविकताओं पर उचित ध्यान दिया जाना चाहिए। न्यायालय के लिए लिखते हुए जस्टिस सीकरी ने कहा कि:

"30. किसी भी तरह से यह सुझाव नहीं दिया जाता है कि जब भी बलात्कारका ऐसा आरोप लगाया जाता है, जहां पीड़ित एक बच्ची है, तो इसे एक सत्य के रूप में माना जाना चाहिए और आरोपी व्यक्ति को दोषी ठहराया जाना चाहिए।हम पहले ही इस बात पर चर्चा कर चुके हैं कि किस प्रकार अभियोजन पक्ष की गवाही की जांच और विश्लेषण किया जाना चाहिए ताकि उसमें सच्चाई का पता लगाया जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि पीड़िता का बयान विश्वसनीय है।साथ ही, सभी आवश्यक सावधानियां बरतने के बाद, जब यह पाया जाता है कि अभियोजन पक्ष का बयान विश्वास करने योग्य है, तो मामले को पूरी संवेदनशीलता के साथ निपटाया जाना चाहिए, जो ऐसे मामलों में आवश्यक है।ऐसी स्थिति में जीवन

की वास्तविकताओं का भी जायजा लेना पड़ता है। विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि इस तरह के दुर्व्यवहार के 80% से अधिक मामलों में, अपराधियों पीड़ितों के परिचित होते है जो अजनबी नहीं होते। ज़्यादातर मामलों में, जब अपराधी कोई पारिवारिक सदस्य होता है, तो परिचितों द्वारा किए गए बलात्कार की रिपोर्ट भी नहीं की जाती है, जिसके कई कारण हैं, जिन्हें समझना मुश्किल नहीं है। इनमें सबसे बड़ा कारण सामाजिक कलंक का डर है। एक अन्य बाधा जो कई बार ऐसे पीड़ितों या उनके परिवारों को शिकायत दर्ज कराने से रोकती है, वह यह है कि उन्हें आपराधिक न्याय प्रणाली की पूरी प्रक्रिया अत्यंत भयावह लगती है, साथ ही पीड़ितों की सुरक्षा के लिए कोई तंत्र भी नहीं होता। इसलिए, आपराधिक न्याय प्रणाली में भी महत्वपूर्ण सुधार लाने का समय आ गया है। इसी तरह, यौन हिंसा के पीड़ितों, विशेषकर बच्चों के प्रति उत्तरजीवी-केंद्रित दृष्टिकोण अपनाने की भी सख्त जरूरत है, क्योंकि ऐसे पीड़ितों पर इसका दीर्घकालिक प्रभाव पड़ता है।"

प्रदीप बनाम हरियाणा राज्य[21] में यह माना गया कि जब कोई मामला बाल गवाह से जुड़ा हो तो विचारण न्यायाधीश की भूमिका बढ़ जाती है। न्यायालय ने दर्ज किया:

> "10. किसी नाबालिग का साक्ष्य दर्ज करने से पहले न्यायिक अधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह उससे प्रारंभिक प्रश्न पूछे, ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या नाबालिग उससे पूछे गए प्रश्नों को समझ सकता है और क्या वह तर्कसंगत उत्तर देने की स्थिति में है। न्यायाधीश को इस बात से संतुष्ट होना चाहिए कि नाबालिग प्रश्नों को समझने और उनका उत्तर देने में सक्षम है तथा सच बोलने के महत्व को समझता है। इसलिए, साक्ष्य दर्ज करने वाले न्यायाधीश की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। उसे उचित प्रश्न पूछकर नाबालिग की उचित प्रारंभिक जांच करनी होगी ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या नाबालिगउससे पूछे गए प्रश्नों को समझने में सक्षम है तथा तर्कसंगत उत्तर देने में सक्षम है। प्रारंभिक प्रश्न और उत्तर रिकॉर्ड करना उचित है ताकि अपीलीय न्यायालय विचारण न्यायालय की राय की सत्यता की जांच कर सके।"

सूर्यनारायण बनाम कर्नाटक राज्य[22] में, जिसका उल्लेख ***हरि ओम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य***[23] में तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा किया गया था, यह इस प्रकार माना गया है:

> "5. निस्संदेह, भव्या (पीडब्लू 2), जो घटना के समय लगभग चार वर्ष की थी, एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी है, जिसे शपथ नहीं दिलाई गई, जो उचित है। घटना का समय और स्थान तथा मामले की परिस्थितियां किसी अन्य व्यक्ति के प्रत्यक्षदर्शी होने की संभावना नहीं दर्शाती हैं।बाल गवाह के साक्ष्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है, लेकिन न्यायालय से यह अपेक्षित है कि वह विवेक के नियम के अनुसार ऐसे साक्ष्य पर बारीकी से विचार करे तथा बयानों की गुणवत्ता और उनकी विश्वसनीयता के बारे में आश्वस्त होने के बाद ही बाल गवाह के बयान को स्वीकार करके दोषसिद्धि काआधारबनाए। पीडब्लू 2 के साक्ष्य को केवल उसकी कम उम्र के आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता। पीडब्लू 2 के बाल गवाह होने के तथ्य के कारण न्यायालय को उसके साक्ष्य की जिम्मेदारीपूर्वक और सावधानी से जांच करनी होगी। यदि यह सिद्ध हो जाता है कि वह जिरह की कसौटी पर खरी उतरी है तथा उसके साक्ष्य में कोई कमी नहीं है, तो अभियोजन पक्ष केवल उसकी गवाही के आधार पर दोषसिद्धि का दावा कर सकता है। बाल गवाह की गवाही की पुष्टि करना कोई नियम नहीं बल्कि सावधानी और विवेक का एक उपाय है। किसी बाल गवाह के बयान में कुछ विसंगतियों को उसकी गवाही को खारिज करने का आधार नहीं बनाया जा सकता। साक्ष्य में विसंगतियां यदिभौतिक विवरणों में नहीं हैं, तो इससे बाल गवाह की गवाही को विश्वसनीयता मिलेगी, जो सामान्य परिस्थितियों में, जो कुछ उसने देखा था, उसे उस चीज के साथ मिलाना चाहेगा, जिसको देखी होने की उसने कल्पना की थी। बाल गवाह के साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय, अदालतों को बच्चे को प्रशिक्षित किए जाने की संभावना को खारिज करना आवश्यक है। अभियोजन पक्ष के गुप्त उद्देश्यों के लिए बाल गवाह को प्रशिक्षित करने या उसका उपयोग करने के संबंध में किसी भी आरोप की अनुपस्थिति में,

अदालतों के पास अभियुक्त को दोषी ठहराने या न ठहराने के उद्देश्य से ऐसे गवाह की विश्वास-प्रेरक गवाही पर भरोसा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है।"

हाल ही में, ***मध्य प्रदेश राज्य बनाम बलवीर सिंह***[24] मामले में इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने न्यायमूर्ति जे.बी. पारदीवाला के माध्यम से निर्णय देते हुए, बाल गवाह के साक्ष्य के मूल्यांकन के लिए दिशानिर्देश निर्धारित करने हेतु इस न्यायालय के अनेक पूर्व निर्णयों पर विचार किया। हमने इसका अध्ययन किया है।

मध्य प्रदेश राज्य बनाम रमेश[25]; ***पंछी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य***[26]; तथा ***उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अशोकदीक्षित***[27] आदि में दिए गए अन्य निर्णयों का भी संदर्भ लिया जा सकता है।

14. उपर्युक्त निर्णयों के अवलोकन से जो सिद्धांत प्रस्तुत किए जा सकते हैं, वे हैं:

ए. किसी बाल गवाह की मुकदमे में गवाही देने की योग्यता के परीक्षण के लिए कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता।

बी. कोई बाल गवाह गवाही देगा या नहीं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि विचारण न्यायाधीश इस बात से संतुष्ट है कि गवाह की योग्यता और क्षमता क्या है। इसे निर्धारित करने के लिए न्यायाधीश को गवाह के तौर-तरीके, बुद्धिमत्ता या उसकी कमी, जो भी स्पष्ट हो, पर गौर करना होता है; सत्य और असत्य के बीच अंतर की समझ आदि।

सी. बाल गवाह को शपथ न दिलाए जाने से उनकी गवाही संदिग्ध या अनुपयोगी नहीं हो जाएगी।

डी. विचारण न्यायाधीश को बाल गवाहों के बहकावे, प्रभावित होने और उन्हें प्रशिक्षित किए जाने की संभावना के प्रति सजग रहना चाहिए, क्योंकि उनकी मासूमियत के कारण, ऐसे मामले उन लोगों के लिए आसान होते हैं जो एक या दूसरी दिशा में परीक्षण के परिणाम को प्रभावित करना चाहते हैं।

ई. इसलिए, एक बाल गवाह की गवाही की पुष्टि करना, एक उचित व्यावहारिक बुद्धिमत्ता है।

एफ. बाल गवाह से जिरह करने पर कोई रोक नहीं है। यदि उक्त गवाह जिरह में खरा उतरता है, तो अभियोजन पक्ष को पूरी तरह से उसके आधार पर दोषसिद्धि की मांग करने का अधिकार है।

15. यह मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर भी आधारित है। इस मामले में कानून बिल्कुल स्पष्ट है। जब दोषसिद्धि परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित होती है, तो परिस्थितियों की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि वह अभियुक्त के अपराध के अलावा अन्य सभी संभावित परिकल्पनाओं को खारिज कर दे। सबसे अधिक मान्यता प्राप्त निर्णय ***शरद बिरधीचंद सारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य***[28] है जिसमें न्यायमूर्ति एस. मुर्तजा फजल अली ने निम्नलिखित पंचशील सिद्धांत निर्धारित किए:

"153. इस निर्णय का गहन विश्लेषण यह दिखाएगा कि किसी अभियुक्त के विरुद्ध मामला पूरी तरह स्थापित माने जाने से पहले निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिए:

(1)जिन परिस्थितियों के आधार पर दोष का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें पूरी तरह स्थापित किया जाना चाहिए।

यहां यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस न्यायालय ने संकेत दिया था कि संबंधित परिस्थितियां "स्थापित होनी चाहिए या होनी चाहिए" न कि "स्थापित की जा सकती हैं"। "साबित किया जा सकता है" और "साबित किया जाना चाहिए या अवश्य किया जाना चाहिए" के बीच न केवल व्याकरणिक बल्कि कानूनी अंतर भी है, जैसा कि इस न्यायालय ने *शिवाजी साहबराव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य* [(1973) 2 एससीसी 793: 1973 एससीसी (क्री) 1033: 1973 सीआरएल एलजे 1783] में कहा था, जहां ये टिप्पणियां की गई थीं। [एससीसी पैरा 19, पृ. 807: एससीसी (क्री) पृ. 1047]

"निश्चित रूप से, यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि अभियुक्त को दोषी होना चाहिए, न कि केवल दोषी

हो सकता है, तभी अदालत उसे दोषी ठहरा सकती है और 'हो सकता है'तथा 'होना चाहिए'के बीच मानसिक दूरी बहुत लंबी है तथा अस्पष्ट अनुमानों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करती है।"

(2) इस प्रकार स्थापित तथ्य केवल अभियुक्त के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए, अर्थात्, उन्हें अभियुक्त के दोषी होने के अलावा किसी अन्य परिकल्पना पर समझाया नहीं जा सकता है,

(3) परिस्थितियाँ निर्णायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिए,

(4) उन्हें सिद्ध की जाने वाली परिकल्पना को छोड़कर हर संभावित परिकल्पना को बाहर कर देना चाहिए, और

(5) साक्ष्यों की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार न बचे और यह दर्शाया जाना चाहिए कि सभी मानवीय संभावनाओं में कृत्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा।"

16. यह भी विचार करना महत्वपूर्ण है कि किसी व्यक्ति को किसी अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने या दोषमुक्त किए जाने से पहले, दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर कितनी निश्चितता की आवश्यकता होती है। यह प्रश्न ***रमाकांतराय बनाम मदन राय***[29] के मामले में न्यायालय के समक्ष आया था, जिसमें यह कहा गया था:

"23. किसी व्यक्ति को, निस्संदेह, किसी अपराध के लिए दोषी न ठहराए जाने का गहरा अधिकार है जो उचित संदेह से परे सबूत के मानक द्वारा स्थापित नहीं है। हालाँकि यह मानक एक उच्चतर मानक है, फिर भी, कोई पूर्ण मानक नहीं है। "प्रमाण" के लिए किस हद तक संभावना है, यह प्रत्येक मामले के लिए एक विशेष अभ्यास है। संभाव्यता का उल्लेख करना "प्रमाण" के बराबर है, यह एक अभ्यास है, साक्ष्य की अन्योन्याश्रयता और एक साक्ष्य की दूसरे द्वारा पुष्टि, जैसा कि विद्वान लेखक कहते हैं: [देखें सबूत का गणित ॥ : ग्लेनविले विलियम्स, क्रिमिनल लॉ रिव्यू, 1979, स्वीट और मैक्सवेल द्वारा, पृष्ठ 340 (342)]

"यदि साक्ष्य के अलग-अलग टुकड़े परस्पर निर्भर हों तो साधारण गुणन नियम लागू नहीं होता है। दो घटनाएँ तब आश्रित होती हैं जब वे एक साथ घटित होती हैं, और ऐसी घटनाओं के साक्ष्य को भी आश्रित कहा जा सकता है। जूरी सदस्य को संदेह हो सकता है कि कथित स्वीकारोक्ति को स्वीकार किया जाए या नहीं, तथा उसे संदेह हो सकता है कि क्या इस तथ्य से दोषी का अनुमान लगाया जाए कि प्रतिवादी न्याय से भाग गया है। लेकिन चूंकि आम तौर पर निर्दोष लोगों के बजाय दोषी लोग ही अपराध स्वीकार करते हैं और निर्दोष लोगों के बजाय दोषी लोग ही भाग जाते हैं, इसलिए इन दोनों संदेहों को एक साथ नहीं बढ़ाना चाहिए। एक सबूत दूसरे सबूत की पुष्टि कर सकता है।"

24. संदेह को उचित कहा जाएगा यदि वे अमूर्त अटकलों के उत्साह से मुक्त हों। कानून सत्य के अलावा किसी और को पसंद नहीं कर सकता। उचित संदेह का गठन करने केलिए, इसे अत्यधिक भावनात्मक प्रतिक्रिया से मुक्त होना चाहिए। अभियुक्तों के अपराध के बारे में संदेह वास्तविक और सारवान होना चाहिए, जो साक्ष्य के आधार पर या उसकेअभाव के आधार पर उत्पन्न हो, न कि केवल अस्पष्ट आशंकाओं के आधार पर। उचित संदेह कोई काल्पनिक, तुच्छ या मात्र संभावित संदेह नहीं है; बल्कि तर्क और सामान्य ज्ञान पर आधारित एक उचित संदेह है। इसे मामले में मौजूद सबूतों से विकसित होना चाहिए।

25. संभाव्यता की अवधारणाएं, तथा इसकी डिग्री, स्पष्ट रूप से गणितीय रूप से गणना की जाने वाली इकाइयों के संदर्भ में व्यक्त नहीं की जा सकती हैं, कि ऐसी कितनी इकाइयां उचित संदेह से परे प्रमाण का गठन करती हैं। संभाव्यता की डिग्री और प्रमाण की मात्रा के मूल्यांकन में एक स्पष्ट व्यक्तिपरक तत्व मौजूद होता है। अंतिम विश्लेषण में फोरेंसिक संभाव्यता को सुदृढ़ सामान्य ज्ञान और अंततः

न्यायाधीश के प्रशिक्षित अंतर्ज्ञान पर आधारित होना चाहिए। जबकि आपराधिक प्रक्रिया द्वारा अभियुक्त व्यक्तियों को दी गई सुरक्षा को खत्म नहीं किया जाना चाहिए, वहीं दूसरी ओर, बिना जानकारी के तुच्छ बातों को वैध बना देने से आपराधिक न्याय प्रशासन का मजाक बन जाएगा। इस स्थिति को जस्टिस वेंकटचलैया (तत्कालीन माननीय न्यायाधीश) ने *स्टेट ऑफ यू.पी. बनाम कृष्ण गोपाल* [(1988) 4 एससीसी 302: 1988 एससीसी (क्री) 928: एआईआर 1988 एससी 2154] में स्पष्ट रूप से बताया था।"

16.1 ***के. गोपाल रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य***[30] मामले में न्यायमूर्ति ओ. चिनप्पा रेड्डी की टिप्पणियां भी शिक्षाप्रद हैं। उन्होंने कहा:

9. .... एक उचित संदेह, यह टिप्पणी की गई है, "का अर्थ कुछ हल्का, हवाई, अतार्किक संदेह नहीं है जो किसी भी समय या अन्य किसी भी चीज़ के बारे में हममें से किसी के दिमाग में आ सकता है; इसका मतलब दोषसिद्धि की अनिच्छा से सहानुभूति से उत्पन्न संदेह नहीं है; इसका मतलब है एक वास्तविक संदेह, कारणों पर आधारित एक संदेह [सैल्मन, जे. ने *आर. बनाम फैंटल* में जूरी को अपने आरोप में 1959 क्रिमिनल लॉ रिव्यू 584 में रिपोर्ट किया]। जैसा कि *मिलर बनाम मिनिस्टर ऑफ पेंशन* [(1947) 2 ऑल ईआर 372] में लॉर्ड डेनिंग ने कहा था, "उचित संदेह से परे सबूत का मतलब संदेह की छाया से परे सबूत नहीं है। अगर कानून न्याय के मार्ग को विचलित करने के लिए काल्पनिक संभावनाओं को स्वीकार करता है तो वह समाज की रक्षा करने में विफल होगा। यदि किसी व्यक्ति के खिलाफ सबूत इतने मजबूत हैं कि उसके पक्ष में केवल एक दूरस्थ संभावना ही बचती है, जिसे इस वाक्य के साथ खारिज किया जा सकता है कि "बेशक यह संभव है, लेकिन कम से कम संभावित नहीं है", तो मामला उचित संदेह से परे साबित होता है, लेकिन इससे कम कुछ भी पर्याप्त नहीं होगा।*खेम करण बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* [(1974) 4 एससीसी 603: 1974 एससीसी (क्रि) 689: एआईआर 1974 एससी 1567] में इस न्यायालय ने यह टिप्पणी की:

"न तो मात्र संभावनाएं, न ही दूरगामी संभावनाएं, और न ही मात्र संदेह जो उचित नहीं हैं, न्याय के प्रशासन के लिए खतरे के बिना, किसी अभियुक्त व्यक्ति को बरी करने का आधार हो सकते हैं, अगर अन्यथा काफी विश्वसनीय गवाही हो।"

17. उपरोक्त विधि के सिद्धांतों पर विचार करने के बाद, आइए अब हम आगे बढ़ें।हमने गवाह के साक्ष्य की स्वतंत्र रूप से जांच की है, जिस पर भरोसा करके विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी-अभियुक्त की सजा दर्ज की थी, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा गलत तरीके से सराहा गया था, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा उलट दिया गया था।यह सच है कि बाल गवाह (पीड़िता) ने अपने खिलाफ अपराध के बारे में कुछ भी नहीं बताया है। घटना के बारे में पूछे जाने पर, विचारण न्यायाधीश ने दर्ज किया कि 'वी' चुप थी, और आगे पूछे जाने पर, उसने केवल चुपचाप आंसू बहाए और इससे ज़्यादा कुछ नहीं। अपराध के बारे में गवाही से कुछ भी पता नहीं चल सका। हमारे विचार से, इसे प्रतिवादी के पक्ष में एक कारक के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। 'वी' के आंसुओं को उनके महत्व के अनुसार समझना होगा। यह चुप्पी प्रतिवादी के लिए लाभकारी नहीं हो सकती। यहाँ चुप्पी एक बच्ची की है।इसकी तुलना एक पूर्णतः जागरूक वयस्क अभियोक्त्री की चुप्पी से नहीं की जा सकती, जिसे पुनः अपनी परिस्थितियों के आधार पर तौलना होगा।***हेमुदन नन्भा गाढ़वी बनाम गुजरात राज्य***[31] मामले में यह माना गया है कि नौ वर्षीय अभियोक्त्री का अपने बयान से पलट जाना अभियोजन पक्ष के लिए घातक झटका नहीं होगा, जब अन्य साक्ष्य अभियुक्त के अपराध को स्थापित कर सकते हैं।इन तथ्यों में, 'वी' ने अपने बयान से पलटी नहीं है। आघात ने उसे खामोशी में जकड़ लिया है। उसके युवा कंधों पर पूरे अभियोजन पक्ष का भार डालना अनुचित होगा।एक बच्ची जो इस भयावह कृत्य से कम उम्र में ही सदमे में है, उसे इस आधार से मुक्त किया जाना चाहिए जिसके आधार पर उसके अपराधी को सलाखों के पीछे डाला जा सके।लगभग सभी अन्य मामलों में, अभियोक्त्री की गवाही मौजूद होती है और वह अभियुक्त की दोषसिद्धि का एक अनिवार्य हिस्सा होती है, लेकिन साथ ही, ऐसा कोई कठोर नियम नहीं है कि ऐसे बयान के अभाव में दोषसिद्धि कायम नहीं रह सकती, विशेष रूप से तब जब अन्य साक्ष्य, चिकित्सीय और परिस्थितिजन्य, ऐसे निष्कर्ष की ओर संकेत करते हुए उपलब्ध हों।***महाराष्ट्रराज्य बनाम बंडू उर्फ दौलत***[32] का संदर्भ लिया जा सकता है, जिसमें अभियोक्त्री "गूंगी, बहरी और

मानसिक रूप से विक्षिप्त"थी।न्यायालय ने कहा कि गवाह के रूप में उसकी जांच न होने पर भी, रिकार्ड पर उपलब्ध अन्य साक्ष्य आरोपी को दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त थे|इसलिए, कानून का सिद्धांत यह है कि यदि अभियोक्ता गवाही देने में असमर्थ है, या किसी उचित कारण से उसकी जांच नहीं की जाती है, तो दोषसिद्धि की संभावना स्वतः ही समाप्त हो जाती है। इस स्तर पर, यह दर्ज करना महत्वपूर्ण है कि हमें एक पल के लिए भी यह नहीं समझना चाहिए कि विकलांग व्यक्ति परिभाषा के अनुसार एक अक्षम गवाह है।***पाटन जमाल वली बनाम आंध्र प्रदेश राज्य***[33] में इस न्यायालय ने ***मांगे बनाम हरियाणा राज्य***[34] में इस न्यायालय द्वारा की गई पहले की टिप्पणी पर नाराजगी जताई, जिसमें न्यायालय ने कहा था कि "एक बाल गवाह होने के अलावा, वह बहरी और गूंगी भी थी और उससे पूछताछ करने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होता।" पैरा 48 में यह माना गया:

> "48. इसतरहकान्यायिकरवैयाविकलांगव्यक्तियोंकेखिलाफअंतर्निहितपूर्वाग्रह और रूढ़िवादिता से उपजा है और उसे कायम रखता है|हमारा मानना है कि विकलांगता से ग्रस्त अभियोक्ता या विकलांग गवाह की गवाही को केवल इसलिए कमजोर या निम्न नहीं माना जा सकता, क्योंकि ऐसा व्यक्ति अपने सक्षम समकक्षों की तुलना में दुनिया के साथ भिन्न तरीके से बातचीत करता है।जब तक ऐसे गवाह की गवाही न्यायिक विश्वास पैदा करने के मानदंडों को पूरा करती है, तब तक वह पूर्ण कानूनी महत्व की हकदार है|यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि ऐसी गवाही की सराहना करने वाले न्यायालय को इस तथ्य पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि गवाह की विकलांगता के परिणामस्वरूप, उसकी गवाही, स्वस्थ गवाह की गवाही की तुलना में, भिन्न रूप में दी जा सकती है|उदाहरण के लिए, इस मामले में, पीडब्लू 2 की अंधेपन का मतलब था कि उसका दुनिया से कोई दृश्य संपर्क नहीं था। इसलिए, अपने आस- पास के लोगों को पहचानने का उसका प्राथमिक तरीका उनकी आवाज़ की ध्वनि है। और इसलिए पीडब्लू 2 की गवाही को अभियोजन पक्ष की गवाही के बराबर महत्व दिया जाना चाहिए, जो अपीलकर्ता को दृष्टि से पहचानने में सक्षम होगी।"
>
> (जोर दिया गया)

हम इस दृष्टिकोण का पूरी तरह से समर्थन करते हैं।चर्चा का निष्कर्ष यह है कि अभियोक्ता के साक्ष्यका अभाव, सभी मामलों में, अभियोजन पक्ष के मामले में नकारात्मक बात नहीं है।

18. इसलिए, हम अन्य गवाहों के बयान पर आते हैं। पीडब्लू-2 के बयान पर अविश्वास करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया आधार यह है कि उसके बयान, जो एफआईआर का हिस्सा था, और न्यायालय के समक्ष उसके बयान के बीच एक महत्वपूर्ण विरोधाभास था।जैसा कि ऊपर बताया गया है, एफआईआर में कहा गया है कि जब पीडब्लू-2 अपराध स्थल पर पहुंचा, तो आरोपी द्वारा पहना गया वस्त्र (धोती) ढीला और खुला हुआ था और वह अभिसाक्षी को देखकर भाग गया। जबकि, न्यायालय के समक्ष दिए गए बयान में, जिसे ऊपर भी बताया गया है, यह कथन इस प्रकार है कि जब उसने आरोपी को देखा, तो वह नीचे झुका हुआ था और पीड़िता पर 'बैठा' हुआ था, जिसका उल्लेख उसने कथित तौर पर अधिकारियों से किया था, और उन्होंने रिपोर्ट में इसका उल्लेख करना नज़रअंदाज़ कर दिया।इस बिंदु पर, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि पी.डब्लू.-2 की गवाही से यह पता नहीं चलता कि वह पढ़/लिख सकता है या नहीं, इससे यह भी पता नहीं चलता कि रिपोर्ट किसने लिखी, और न ही यह स्पष्ट है कि यदि किसी अन्य व्यक्ति, अर्थात् मुंशी ने रिपोर्ट लिखी है, तो उससे पूछताछ की गई थी या नहीं।

19. विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या एफआईआर और न्यायालय में दिए गए बयान में विरोधाभास इतना महत्वपूर्ण है कि उसके बयान को बदनाम किया जा सके, जिससे अभियोजन पक्ष के मामले को घातक झटका लग सके। ***पंजाब राज्य बनाम करतार सिंह***[35] मामले में इसन्यायालय की संविधान पीठ ने न्यायमूर्ति पांडियन के माध्यम से निर्णय देते हुए कहा कि जिरह का उद्देश्य गवाह को बदनाम करना/ऐसे व्यक्ति से तथ्य उगलवाना है, जो दूसरे पक्ष के पक्ष में हो सकता है, आदि।इस गवाह की जिरह देखने के बाद, हमें इनमें से कोई भी मानदंड पूरा नहीं मिला। यहां तक कि इस विसंगति को भी उसके सामने नहीं रखा गया ताकि इस संबंध में गवाह से कोई जवाब मिल सके।इसके अलावा, हम ***संजीव कुमार गुप्ता बनाम उत्तर प्रदेश राज्य***[36] में दिए गए फैसले पर भी गौर कर सकते हैं। उक्त मामले में, उत्तराखंड उच्च न्यायालय से उत्पन्न एक अपील पर निर्णय लेते समय इस न्यायालय की समन्वय पीठ को इसी तरह की स्थिति का सामना करना पड़ा था।

एफआईआर में दिए गए बयान और न्यायालय `में दिए गए बयान में विसंगति थी। यह माना गया कि विसंगति महत्वपूर्ण है या नहीं, यह मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर तय किया जाना चाहिए।यह माना गया कि चूंकि अन्य प्रकृति के साक्ष्य, जैसे कि चिकित्सा साक्ष्य, अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन करते हैं, इसलिए विरोधाभास का मूल्यांकन उसी प्रकाश में किया जाना चाहिए, जैसा कि उस मामले में किया गया था।

20. हमने पीडब्लू-14 के साक्ष्य की जांच की है।बचाव पक्ष ने यह तर्क दिया कि 'वी' के गुप्तांग में आई चोट किसी कील या पिन से नहीं लग सकती थी। आगे डॉक्टर के साक्ष्य को बदनाम करने का प्रयास यह सुझाव देकर कि उन्होंने वास्तव में रिश्वत से प्रभावित होकर अपने निष्कर्ष दिए थे, यह केवल एक आरोप/बयान मात्र है, क्योंकि यह रिकॉर्ड द्वारा पूरी तरह से निराधार है। न्यायालय द्वारा पूछे जाने पर भी गवाह ने जवाब दिया कि 'वी' को चोट लगने का कारण संभोग या दुर्घटना हो सकती है।इसके साथ ही, यह निष्कर्ष कि अभियुक्त के जननांग पर चोट केवल नाबालिग महिला के साथ जबरदस्ती संभोग के कारण ही संभव है, ऐसी परिस्थिति की ओर इशारा करता है कि प्रतिवादी-अभियुक्त ने 'वी' के खिलाफ अपराध किया है।

21. अभियुक्त और 'वी' के पिता के बीच दुश्मनी की संभावना इस हद तक स्थापित नहीं हुई है कि यह अभियोजन मामले की दीवार में दरार का प्रतिनिधित्व करे, जिससे उचित संदेह पैदा हो।

22. उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, अपील स्वीकार की जाती है। राजस्थान उच्च न्यायालय जयपुर पीठ, जयपुर के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा एस.बी. आपराधिक अपील संख्या 503/1987 में दिए गए दोषमुक्ति के निर्णय को अपास्त किया जाता है, तथा सत्र न्यायाधीश, टोंक द्वारा सत्र परीक्षण संख्या 26/86 में दिनांक 19 नवम्बर 1987 को दिए गए दोषसिद्धि के निर्णय को बहाल किया जाता है।प्रतिवादी-अभियुक्त को निर्देश दिया जाता है कि वह इस निर्णय की तिथि से चार सप्ताह के भीतर सक्षम प्राधिकारी के समक्ष आत्मसमर्पण करें, ताकि यदि उसने अभी तक सजा पूरी नहीं की है तो वह विद्वान विचारण न्यायलय द्वारा दी गई सजा को पूराकर सके।

यदि कोई लंबित आवेदन है तो उसे बंद कर दिया जाएगा।

मामले के मूल रिकार्ड संबंधित न्यायालय को वापस भेजे जाएं।

न्यायमूर्ति.............................
(विक्रम नाथ)

न्यायमूर्ति.............................
(संजय करोल)

नईदिल्ली;

मार्च 18 2025.

संदर्भित टिप्पणियाँ

1. पहचान छुपाई गई

2. अपराध संख्या 31/86

3.एस.बी. आपराधिक अपील संख्या 503/1987 में

4.सत्र परीक्षण 26/86

5.पहचान की सुरक्षा के उद्देश्य से पीड़िता के पिता का नाम भी हटा दिया गया है।

6 इसके बाद आई.पी.सी.

7. एआईआर 1955 एससी 907

8. 2022 की आपराधिक अपील संख्या 78

9 पहचान छुपाई गई

10. (2003) 8 एससीसी 551

11. (2004) 1 एससीसी 475

12. (2019) 3 एससीसी 771

13. (2019) 2 एससीसी 703

14. मूल रिकॉर्ड से अनुवादित

15. (2002) 7 एससीसी 745

16. (1997) 5 एससीसी 341

17. (2021) 4 एससीसी 345

18. (2001) 9 एससीसी 129

19.व्हीलर बनाम संयुक्त राज्य अमेरिका, 1895 एससीसी ऑनलाइन यूएस एससी 220

20. (2017) 2 एससीसी 51

21. 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 777

22. (2001) 9 एससीसी 129

23. (2023) 4 एससीसी 345

24. 2025 एससीसी ऑनलाइन 390; 2025 आइएनएससी 261

25. (2011) 4 एससीसी 786

26. (1998) 7 एससीसी 177

27. (2000) 3 एससीसी 70

28. (1984) 4 एससीसी 116

29. (2003) 12 एससीसी 395

30. (1979) 1 एससीसी 355

31. (2019) 17 एससीसी 523

32. (2018) 11 एससीसी 163

33. (2021) 16 एससीसी 225

34. (1979) 4 एससीसी 349

35.(1994) 3 एससीसी569

36. (2015) 11 एससीसी 69

Anil Joshi